करबला से मसीह तक

मैं क्यों अल-मसीह का पैरोकार हो गया

बरकतुल्लाह

करबला से मसीह तक

मैं क्यों अल-मसीह का पैरोकार हो गया

बरकतुल्लाह

karbalā se masīh tak. maiṅ kyoṅ al-masīh kā pairokār ho gayā.

From Karbala to Christ. Why I Became a Follower of al-Masih

by Barkatullah
(Urdu—Hindi script)

© 2018 Chashma Media
published and printed by
Good Word, New Delhi

Bible quotations are from UGV.

for enquiries or to request more copies:
askandanswer786@gmail.com

ठोस शिया ख़ानदान में परवरिश

मेरी पैदाइश नारोवाल के एक शिया मुसलिम ख़ानदान में हुई। नारोवाल अब मग़रिबी पंजाब पाकिस्तान की हद पर है। इस ख़ानदान को लोग उसकी बुज़ुर्गी, संजीदगी और मज़हबी उसूल की पाबंदी और रुसूम की अदायगी की वजह से बेहद इज़्ज़त की नज़र से देखते थे। लोग मेरे दादा का नाम नहीं लेते थे बल्कि ताज़ीमन उनको लफ़्ज़ जनाब से ख़िताब करते थे। नमाज़ो-मसजिद उनकी ज़िंदगी का जुज़ बन गई थी। अगर कभी दुकान में न मिलें तो समझ लीजिए कि वह मसजिद में ज़रूर होंगे। बचपन की एक पुरानी याद यह है कि मैं उनकी गोद में बैठा हूँ और वह शाम की नमाज़ के बाद क़ुरआन शरीफ़ की तिलावत कर रहे हैं।

मेरी वालिदा इस क़दर नेक थीं कि बहुत-सी औरतों को यों उनकी क़ब्र के पास दफ़न किया गया कि उनके सर मेरी वालिदा मरहूमा

के पैर की जानिब थे। उनका एक भाई जो मेरे मामूँ हुए करबला में जाकर बस गए थे। यह वह मक़ाम है जहाँ रसूल के नवासे हज़रत हुसैन को मारा गया था।

मेरे ख़ानदान का रोज़ाना का काम-काज सुबह की नमाज़ और क़ुरआने-पाक की तिलावत से शुरू होता था। जब मैं सिर्फ़ बच्चा ही था मुझे सैयद शाह साहब के सुपुर्द कर दिया गया ताकि उनकी मदद से क़ुरआन का हाफ़िज़ा करूँ। उनकी बेटी ने मेरी बहन को भी क़ुरआन पढ़ना सिखा दिया। दिन-भर का काम रात की दुआ करने के बाद ख़त्म कर दिया जाता था।

स्कूल में कामयाबी

यह था माहौल उस घर का जिसमें मैंने परवरिश पाई। बचपन ही से मुझे एक मिशन स्कूल में दाख़िल करा दिया गया। लेकिन जल्द ही मुझे ऊँचे प्राइमरी स्कूल में चढ़ा दिया गया। इन दोनों स्कूलों में ईसाई तालीम दी जाती थी। दूसरे मज़ामीन की निसबत किताबे-मुक़द्दस की तालीम को ज़्यादा अहमियत दिया जाता था। चूँकि मेरी क़ुव्वते-याददाश्त अच्छी थी इसलिए मैं ईसाई तालीम के लिहाज़ से दूसरे ईसाई तालिब-इल्मों से कहीं बेहतर था। शायद मेरी

ज़िंदगी में कोई भी ऐसा साल न गुज़रा जबकि मैंने किताबे-मुक़द्दस की तालीम में पहला इनाम न पाया हो।

मेरे वालिद का नाम शेख़ रहमत अली था। वह मिलनसार और हमदर्द इनसान थे। उनका रवैया हर मज़हब की जानिब से बहुत आज़ादाना था। हिंदू, मुसलमान और ईसाई सब उनके दोस्त थे। दूसरे फ़िरक़ों के मुसलमानों से भी उनका काफ़ी रब्त-ज़ब्त था। अगरचे वह कारोबारी इनसान थे फिर भी हर सुबह क़ुरआन और किताबे-मुक़द्दस की तिलावत करते थे। फ़ारसी शायर और नसरनिगार उनको बेहद पसंद थे।

इसके बरअक्स मेरे चचा साहब जो उनके छोटे भाई थे बहुत ही कट्टर शिया थे जो कि सिर्फ़ क़ुरआन और शिया तफ़सीरों का मुतालआ करते थे। वह मेट्रिकुलेशन पास थे। यह उस शहर के लिए उस ज़माने के लिहाज़ से आला क़िस्म की सनद तसव्वुर की जाती थी। उनके कुतुब-ख़ाने में बहुत-सी ऐसी किताबें थीं जो कि ईसाइयत और हिंदू मज़हब के ख़िलाफ़ थीं। दूसरे मुसलिम फ़िरक़ों के ख़िलाफ़ भी उनके पास काफ़ी किताबें थीं।

ईसाइयों के ख़िलाफ़ किताबें

जब मेरे चचा ने देखा कि मैं हर साल किताबे-मुक़द्दस का इनाम हासिल करता हूँ और बहुत-सी आयतें भी मुझको याद हैं तो उन्होंने मुनासिब समझा कि मेरी दीनी तालीम को अपने हाथ में लें। लिहाज़ा उन्होंने मुझे चंद किताबें पढ़ने के लिए दीं। उस वक़्त मेरी उम्र 12 साल की थी। मैं छटी जमात में था। सादी और फ़िरदौसी का कलाम अच्छी तरह से पढ़ सकता था। पस मैं उन किताबों को जो मेरे चचा ने मुझको दीं ख़ूब पढ़ सकता था। एक किताब ने मेरे ऊपर बहुत असर किया। उसका नाम "ज़ुब्दतुल-अक़्वाल अला इंजील" था। यह किताब ईसाइयत और इस्लाम का मुवाज़ना करके किताबे-मुक़द्दस की आयात की तरदीद और तंक़ीद करती है। इस किताब को मैं हर वक़्त पढ़ता था। मैं वहाँ जाता था जहाँ ईसाई बाज़ारों में मुनादी करते थे और उनसे बहस करके उनको बड़ी मुश्किल में डालता था।

मैं इन किताबों से बहुत मतअस्सर हुआ। एक दिन मैं चराग़ जलाए मत्ती की इंजील को पढ़ रहा था। मालूम नहीं कौन-सा मज़मून था जो मैं पढ़ रहा था। अचानक जोश में आकर मैंने किताब को चराग़ की लौ में लगाकर उसे जला डाला। मेरी वालिदा यह देखकर डर गईं, लेकिन मैंने उनको दिलासा दिया और बताया कि मैंने सिर्फ़ इंजील जला दी है। लेकिन उनकी आवाज़ ने वालिद

साहब को भी इधर मुतवज्जिह कर दिया। कमरे में आकर उन्होंने मुझको काफ़ी तंबीह की। उन्होंने कहा, “बताओ, तुमको कैसा लगेगा अगर कोई ईसाई क़ुरआन को जला दे?” मेरे चेहरे पर ख़ौफ़ो-डर के आसार देखकर उन्होंने शेख़ सादी का एक क़ौल पेश किया, “दूसरों के साथ वह सुलूक न करो जो कि तुम नहीं चाहते कि दूसरे तुम्हारे साथ करें।” मेरे चचा भी कमरे में आ गए थे, अलबत्ता बड़े भाई के सामने कुछ बोल न सके। लेकिन बाद में चचा ने मुझसे कहा, “जो कुछ भी तूने किया है एक बड़ा काम है, यह गुनाह नहीं है।”

मुहर्रम का पुरजोश जशन

मुहर्रम का महीना शिया मुसलमानों के लिए एक पाक महीना माना जाता है, क्योंकि हज़रत इमाम हुसैन इस माह क़त्ल हुए थे। हर साल इस माह से चौदह रोज़ क़बल शिया लड़के जमा होकर एक जुलूस शहर की सड़कों पर निकालते थे। मैं भी निकलकर अपने चार साथियों के साथ अपना सीना पीटते हुए यह नारा लगाता था,

हुसैन, हुसैन, हुसैन, हुसैन
शहीदे-करबला हुसैन

एक बार हमने लखनऊ से एक ज़ाकिर यानी करबला की जंग का ज़िक्र करनेवाला बुलाया। उसके पास एक डंडा था जिसमें क़रीबन एक दर्जन तेज़ छुरियाँ बँधी हुई थीं। उसने इन छुरियों से अपने तमाम शाने ज़ख़मी कर डाले। यह देखकर मेरे अंदर इतना जोशो-जज़बा पैदा हुआ कि मैंने छुरियाँ अपने हाथ में लेकर अपने शानों को बुरी तरह ज़ख़मी कर डाला। मेरे मामूँ ने ज़बरदस्ती मेरे हाथों से उनको छीन लिया। इस वाकिये से मैं अपने जोशो-ख़ुरोश और पाकबाज़ी के बाइस मशहूर हो गया।

एक ईसाई की बेइज़्ज़ती

मेरे बचपन का एक वाक़िया मुझे याद है। चंद ईसाई मुबश्शिर बाज़ार में मुनादी कर रहे थे। उनमें से एक यूपी के मिस्टर टामस थे। वह एक कपड़े रँगनेवाले मुसलमान की दुकान के पास मुनादी कर रहे थे कि यकलख़्त रँगनेवाले ने निकलकर मिस्टर टामस के मुँह पर थूककर ज़ोर का तमाँचा उनके गाल पर रसीद किया। रंग करनेवाला निहायत क़वी-हैकल था, लिहाज़ा लोगों को उम्मीद थी कि अब लड़ाई हो जाएगी। क्योंकि मिस्टर टामस भी काफ़ी तनदुरुस्त थे। लेकिन इसके बावुजूद मिस्टर टामस ने अपना रूमाल निकालकर अपने गाल को पोंछ लिया और मुनादी करना शुरू कर

दी। मिस्टर टामस ने रंग करनेवाले से कहा, “ख़ुदा तुमको बरकत दे।” यों वह मुनादी करते रहे।

रँगनेवाला चुप-चाप अपनी दुकान में वापस चला गया। मिस्टर टामस के इस रवैये से लोग निहायत मुतअस्सिर हुए। इस वाकिये ने मुझको सर-ता-पा हिला दिया। क्योंकि मैं ख़याल करता था कि मसीह का पहाड़ी वाज़ एक तालीम है जिस पर अमल नहीं किया जा सकता और इसलिए क़ाबिले-क़बूल नहीं है।

हाई स्कूल में दाख़िला

जब मैंने आठवाँ दर्जा पास कर लिया तो मुझे एक मिशन हाई स्कूल में दाख़िल करा दिया गया। इस स्कूल में भी मैंने किताबे-मुक़द्दस के तमाम इनामात हासिल किए। तालिब-इल्मों और तमाम उस्तादों की नज़र में मुझे मज़हबी लियाक़त और इल्म में निहायत क़ाबिल समझा जाता था। लेकिन फ़ारिग़ होते वक़्त मैं उन जगहों पर पहुँच जाता था जहाँ ईसाई मुनादी करते थे। वहाँ मैं उनसे अजीब अजीब सवालात करके उनके जलसों को दरहम-बरहम कर देता था।

गुनाह का काँटा

वह शहर जहाँ मेरा स्कूल था अख़लाक़ी एतबार से निहायत गंदा शहर था, लिहाज़ा मुझको भी वहाँ की हवा लग गई। मैं नौजवान था। इस उम्र में इनसान पर जलदी से बुरा असर पड़ जाता है। स्कूल और बोर्डिंग हाउस की हवा बदी और नारास्ती से भरी हुई थी। एक उस्ताद जो कि बोर्डिंग ही में रहता था निहायत ही बदकार और शरपसंद था। इस माहौल ने मेरी ज़िंदगी में बदकारी के जज़बात भर दिए। अब मुझे शिद्दत से अपनी खोई हुई ज़िंदगी महसूस होने लगी। अंदर से यह आरज़ू बढ़ती गई कि अच्छी ज़िंदगी की ख़ूबियों को दुबारा पाऊँ, हाँ कि गुनाहों की माफ़ी मिल जाए। मैं रोज़ाना नज़दीक की मसजिद में जाता और नमाज़ और दुआ करता कि ऐ ख़ुदा, तू मुझे गुनाहों से नजात बख़्श दे और शैतान के हाथों से छुड़ा ले। लेकिन मुझको कोई जवाब इस दुआ का मिलता नज़र न आया। गुनाह का काँटा मेरे बदन में हर वक़्त चुभता रहता, हमेशा मेरे दिल में खटकता रहता था।

वालिद की तबदीली

अब मेरी ज़िंदगी में एक तबदीली वाक़े हुई जबकि मैं ख़ुश ख़ुश घर वापस जा रहा था कि अपने वालिदैन को बताऊँ कि मैं दर्जे 9

में ख़ूबी के साथ कामयाब हो गया हूँ बल्कि अपने दर्जे में अव्वल आया हूँ। मेरे चेहरे पर ख़ुशी और मुसर्रत के आसार नुमायाँ थे, लेकिन जब मैं शहर में दाख़िल हुआ तो हर चीज़ पर मैंने एक अजीब उदासी और रंजो-ग़म की कैफ़ियत पाई।

दरवाज़े पर मेरे चचा मोहसिन खड़े थे। वह मुझको अलग ले गए और मुझसे कहा, "वालिद ईसाई हो गए हैं, इस वजह से शहर में हैजान पैदा हो गया है। हर शख़्स ग़मज़दा है।" बात यह है कि मेरे वालिद अंजुमने-इस्लामिया के सदर थे।

मेरी वालिदा, दो बहनें और दो भाई भी ईसाई हो गए थे। मुझे देखकर उन्होंने मुझे गले लगा लिया। उनसे मिलते ही मेरे ज़हन से तमाम फ़िकरें और ग़म की शिद्दत दूर हो गई। लेकिन मेरे चचा साहब कमरे में आए और मुझको अलग ले जाकर बोले, "तुम अब इस मुशरिक ख़ानदान के शरीक नहीं हो सकते हो। मैं तुमको गोद ले लूँगा, क्योंकि मैं तुमसे अपने हक़ीक़ी बच्चों की तरह मुहब्बत करता हूँ (यह सच है)। मैं तुमको एम.ए. तक पढ़ाऊँगा और तुमको कोई तकलीफ़ न होगी।" मैंने जवाब दिया, "अगरचे वालिद साहब ईसाई हो गए हैं, लेकिन मैं उनके पास रहूँगा और तौर से हर अमर में जो कि दुरुस्त और शरअन सहीह है ताबेदार रहूँगा।"

जब मेरे वालिद घर आए तो वह मुझको देखकर बहुत ख़ुश हो गए। लेकिन मैं उनके चेहरे पर दुख और तकलीफ़ के निशान जो कि उनके शहरवालों के सताने से पैदा हुए थे देखकर बहुत ग़मगीन

हो गया। वह मेरे उस जवाब से जो मैंने चचा को दिया था बहुत ख़ुश हुए।

दो रोज़ के बाद मुझे शहर के चंद बुज़ुर्गों की जानिब से बुलाया गया। मेरे होनेवाले सुसर मुझको हाथ पकड़कर वहाँ तक ले गए। मेरे सुसर ने वहाँ उनके सामने क़ुरआन शरीफ़ की क़सम ली और इक़रार किया कि वह मुझको एम.ए. तक तालीम देंगे। शर्त यह है कि मैं ईसाई न हूँ और अपने वालिद की पैरवी न करूँ। मैंने उनसे जो वहाँ जमा थे कहा, "मेरा इस्लाम को छोड़ने का कोई इरादा नहीं है। और न ही मेरा अपने अज़ीज़ों को छोड़ने का कोई इरादा है जिन्होंने ईसाई दीन को क़बूल कर लिया है। मैं जानता हूँ कि उनका इसमें कोई बुरा मक़सद नहीं है।"

उन्होंने कहा, "यह सब दुरुस्त है। हमको उनके इरादों की बाबत तो कोई शक नहीं , लेकिन फिर भी हम आराम से नहीं बैठ सकते जबकि हमारा सदर मुशरिक हो जाए। हम पर हर कोशिश अपने दीन और मिल्लत की हिफ़ाज़त में वाजिब है।" मैंने उनसे कहा, "मैं यह सुनकर अफ़सोस करता हूँ। शायद आप मुझको दायराए-इस्लाम में रहने के लिए लालच दे रहे हों।"

नए सिरे से हक़ की तलाश

उसी रात मैंने अपने वालिद से दिल खोलकर बातें कीं। उन्होंने कहा, “मैंने तुमको अपने बपतिस्मे की ख़बर इसलिए नहीं दी कि ऐसा न हो कि तुम्हारे इम्तहान में कोई गड़बड़ हो।” वह पिछले बीस साल से हक़ की तलाश में थे। बिलआख़िर उनको अल-मसीह ही में हक़ मिला। वह मेरे इस फ़ैसले से जो मैंने अपने हक़ में बुज़ुर्गों के रूबरू किया था बेहद ख़ुश हुए। उनकी मज़बूती, वक़ार, मुहब्बत भरे सब्र के तरीक़े और उनका दुख उठाना—इन तमाम चीज़ों ने मेरे ज़हन पर एक ऐसा नक़्श जमा दिया कि मैंने फ़ैसला कर लिया कि इंजीले-शरीफ़ का मुतालआ करूँगा ताकि वह चीज़ मालूम करूँ जिसने मेरे वालिद पर असर किया है।

इंजील के मुतालए में मेरे वालिद ने ख़ुद मेरी मदद की। किताबें जो उन्होंने मुझको पढ़ने के लिए दीं उनमें से एक फ़ैंडर की किताब बनाम “मीज़ानुल-हक़,” एक टिस्डल की किताब बनाम “इस्लाम के एतराज़ मसिहियत पर” और इमाम दीन की कुछ किताबें थीं। मैंने इन किताबों को बड़ी होशियारी से पढ़ा। इन किताबों ने मुझको क़ायल कर दिया कि इंजीले-शरीफ़ मुस्तनद और सच्ची है। अब सिर्फ़ तीन बातें रुकावट का बाइस रह गई थीं, यानी उलूहियते-मसीह, कफ़्फ़ारा और तसलीस। मेरे वालिद ने मुझको चंद और किताबें दीं, लेकिन उस वक़्त यह मेरे लिए कुछ मुश्किल थीं। मुझे

क़बूल करना पड़ा कि फ़िलहाल मैं यह बातें पूरे तौर पर समझ नहीं सकता।

यों अल-मसीह की ज़िंदगी पर ध्यान देने से मैं अपने वालिद के नक़्शे-क़दम पर चलने और मसीह को अपना बचानेवाला क़बूल करने के लिए तैयार हुआ। दूसरे नबियों के मुक़ाबले में अल-मसीह ही ने अपने क़ब्र से जी उठने से गुनाह पर फ़तह हासिल की। सिर्फ़ वही मुझको मेरे गुनाहों से बचा सकता है। इसका मैं क़ायल हो चुका था। ख़ासकर सलीब मेरे लिए पुरमानी बन गई, क्योंकि उसे सलीब पर मेरे गुनाहों की ख़ातिर मारा गया अगरचे वह बेगुनाह था। मुझे यक़ीन हो गया कि ख़ुदा ने मेरे गुनाह उसमें माफ़ कर दिए। और बपतिस्मे के वक़्त मैंने शिद्दत से यही बात महसूस भी की—गुनाहों का एक बड़ा बोझ मेरे कंधों से उतर गया। मैं उस वक़्त मुसर्रत का बयान नहीं कर सकता। वह कैसी अजीब मुसर्रत थी! और इस बात के यक़ीन से कि मेरे गुनाह माफ़ हो गए हैं मेरी ज़िंदगी में एक चैनो-आराम-सा मालूम होने लगा। यह एक बिलकुल नया और अजीब तजरिबा था जिसका मैं ज़िक्र नहीं कर सकता।

मैं उस वक़्त बिलकुल जवान था जब मैंने गुनाहों की माफ़ी और मसीह में नई ज़िंदगी का तजरिबा हासिल किया। जब मैं अपने ईसाई तजरिबे पर नज़र करता हूँ जो मैंने उन बरसों में हासिल किए तो मेरा दिल उसके शुक्र और बेबहा फ़ज़्ल से लबरेज़ होता है। ज्यों-ज्यों मैं उम्र और इलम में बढ़ता गया इसकी हक़ीक़त और

ज़्यादा साफ़ होती गई। मेरा ईमान कि सिर्फ़ मसीहे-मसलूब ही इस टूटी और खोई हुई इनसानियत की उम्मीद है और भी गहरा होता गया। सिर्फ़ मसीह ही गुनाह से छुटकारा और रास्तबाज़ और पाकीज़ा ज़िंदगी अता करता है।